ISSN: 2278-4632
Vol-13, Issue-06, No.02, June : 2023

"२१वीं सदी के प्रमुख हिंदी उपन्यासों में चित्रित मजदूर वर्ग"

मनोजकुमार सुभाष शर्मा
शोधार्थी : पाटकर वर्दे महाविद्यालय, मुंबई विश्वविद्यालय, मुंबई.
संपर्क : 9769068306 / smanoj475@gmail.com

शोध सार :
आधुनिकता के इस दौर में विकासवाद के नाम पर समाज में वर्ग भेद का विस्तार हुआ है । उच्च वर्ग ने निम्न वर्ग को पशुओं की श्रेणी में रखकर उनके साथ पशु की ही भाँति व्यवहार किया है । समाज का श्रमजीवी वर्ग बेरोजगारी, स्वास्थ्य, पलायन, राजनीति, बेघर आदि समस्याओं में उलझ गया है । भारत का श्रमिक वर्ग जितना ईमानदार है उतना ही अधिक मेहनती । इसी वजह से यहाँ की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और धार्मिक व्यवस्था उनका शोषण कर रही हैं । परिणामस्वरूप भारत का मजदूर वर्ग अधिक गरीब हो रहा है । बेरोजगारी, स्वास्थ्य, राजनीति, गरीबी, भुखमरी और पशुतुल्य जीवन के कारण भारत का मजूर वर्ग पलायन होने के लिए विवश भी हुआ परंतु पलायनता के बाद भी उनके जीवन में कुछ खास सुधार नहीं आया । अतः इस शोध आलेख में हम हिंदी उपन्यासों के माध्यम से मजदूर वर्ग की समस्याओं का अध्ययन करते हुए उसके समाधान पर विचार करेंगे ।

मुख्य बिंदु :
श्रमिक जीवन, नौकर वर्ग, मजूर वर्ग, मिल मजदूर, खदान मजदूर, खेतिहर मजदूर, गिरमिटिया मजदूर, आदिवासी मजदूर, शहरी मजदूर, रिक्शाचालक, खाँटी मजदूर, मजदूर यूनियन, पूँजीपति वर्ग, कार्ल मार्क्स आद ।

प्रस्तावना

विकासवाद के साथ-साथ मनुष्य में लालच, घृणा, मोह और दंभ जैसी नकारात्मक भावनाओं ने अपना स्थान बना लिया है । इसी कारण आधुनिकता के इस दौर में पूँजी को ही सर्वोपरि समझा जाने लगा है । परिणामस्वरूप इसी अर्थ (पूँजी) के कारण ही समाज में वर्ग-वाद जैसी समस्या उत्पन्न हुई है । वर्गवादी समाज में एक तरफ उच्च वर्ग अर्थात् पूँजीपति वर्ग है तो दूसरी तरफ निम्न वर्ग अर्थात् श्रमजीवी वर्ग है । क्रूरता के कारण बुर्जुआ वर्ग शोषक वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है, तो सरल एवं मेहनती स्वभाव के कारण मजदूर वर्ग को शोषित वर्ग की श्रेणी में रखा जाता है । उनकी मासूमियत के कारण धूर्त और चालाक बुर्जुआ वर्ग मशीनीकरण से लेकर समाज के विकास के नाम तक उनका शोषण कर रहा है । भारत देश में औद्योगीकरण और मशीनीकरण ने जितना शोषण किया है, उतना शोषण अंग्रेजों के कार्यकाल में भी नहीं हुआ था । इस बात की पुष्टि करते हुए "सुमित सरकार ने कहा है - 'भारत का वास्तविक शत्रु अंग्रेजी राज नहीं है, अपितु समग्र औद्योगिक सभ्यता है । गांधी जी की परिकल्पना उस प्रतिक्रिया का प्रतिनिधित्व करती है जो आधुनिकीकरण की गहरी बेगानगी उत्पन्न करने वाले प्रभावों, विशेषकर औपनिवेशिक परिस्थितियों ने उत्पन्न की थी ।"[1] गाँधी जैसे महान नेता भी मशीनीकरण का घोर विरोध करते थे क्योंकि उन्हें पता था कि मशीनीकरण और औद्योगीकरण की वजह से समाज में बेरोजगारी जैसी समस्या उत्पन्न होगी और समाज का सबसे शक्तिशाली वर्ग (युवा वर्ग) इसकी चपेट में आ जाएगा किंतु आधुनिक समाज ने अपनी सुविधा और सहजता के लिए मशीनीकरण को न केवल स्वीकार किया बल्कि उसे तेजी से आगे भी बढ़ाया है । आज हमें तकनीक के संदर्भ में शिक्षा दी जाती है कि तकनीक के बिना आज कोई भी चीज संभव नहीं है लेकिन गौर करने वाली बात यह है कि प्राचीन कालीन सभ्यता, तकनीक के बिना भी कहीं अधिक सक्षम, व्यवस्थित और उपयोगी थी । उदाहरण के तौर पर हम ताजमहल को देख सकते हैं । ताजमहल तकनीक के बिना भी प्राचीन कला को प्रदर्शित करने का जीवंत उदाहरण है । ताजमहल की खूबसूरती के कारण ही शाहजहाँ ने उसे बनानेवाले मजदूरों के हाथ कलम कर दिये थे । मजदूरों के शोषण की यह घटना जग विख्यात है ।

प्राचीन समय में भारत में मजदूरों को पशुओं की भाँति बंधक बनाकर प्रताड़ित किया जाता था । इन्हीं सब कारणों से मजदूर यूनियन का गठन होना शुरू हो गया । भारत के बुद्धिजीवी, समाज सेवक और राजनेताओं ने

Copyright @ 2023 Author

ISSN: 2278-4632
Vol-13, Issue-06, No.02, June : 2023

भारत के श्रमजीवियों के संरक्षण के लिए अपना बहुमूल्य योगदान दिया है, जिसमें राजनीतिज्ञ आचार्य कृपलानी का नाम भी आता है । "आचार्य कृपलानी ने किसान-मजदूर पार्टी बनाई ।"[2] जिससे किसानों और मजदूरों की हितों की रक्षा की जा सके । समाज की व्यवस्था का अध्ययन करें तो हम पाएंगे कि समाज में सबसे नीचे मजदूर वर्ग है और समाज की यह व्यवस्था वर्ग के आधार पर गढ़ी गयी है । भारत के प्राचीन समय में वर्ण व्यवस्था का चलन था । जहाँ दलित, आदिवासी, चूहड़ और दमित समुदाय को सबसे निम्न श्रेणी में स्थान प्राप्त था । आधुनिकरण के कारण वही वर्ण व्यवस्था अब धीरे-धीरे वर्ग व्यवस्था में परिवर्तित हो गयी है । अतः ऐसा कहना गलत नहीं होगा कि भारत का जो समुदाय निम्न वर्ण में था, वही अब निम्न वर्ग के रूप में तबदील हो गया है । "श्रमिकों की केस-स्टडी यानी व्यक्ति या परिवार-आधारित अध्ययन इस त्रासद यथार्थ को भी उद्घाटित करता है कि इस अमानवीय प्रथा के शिकार मूलतः दलित आदिवासी और पिछड़े वर्ग के हैं ।"[3] हिंदी साहित्य भारत का एक अभिन्न अंग है इसलिए हिंदी साहित्य में भारतीय समाज का उल्लेख मिलता है । सर्वप्रथम हिंदी साहित्य मजदूर वर्ग की समस्याओं से अछूता और अनजान था लेकिन भारतेंदु युग (आधुनिक युग) से हिंदी साहित्य में समाज की समस्याओं को स्थान मिला । तब से साहित्य में आदिवासी, दलित, स्त्री, किन्नर और मजदूर वर्ग के जीवन की समस्या दिखायी देने लगी । जैसे कि आलोचक बच्चन सिंह जी भी कहते हैं "'24 '26 तक कविताओं में अपने ढंग से वर्ग-संघर्ष है ।"[4] यद्यपि 19वीं सदी के बाद से ही हिंदी साहित्य के सभी विधाओं में मजदूर वर्ग को स्थान मिला । साथ ही साहित्यकार से लेकर सामान्य व्यक्ति तक सभी मजदूर जीवन की त्रासद स्थिति पर अपनी राय प्रकट करने लगे । साहित्यकार कल्पना एवं यथार्थ जीवन के अंश को जोड़कर श्रमजीवी वर्ग के दुःख तथा पीड़ा को और अधिक रोचक बनाकर समाज तक पहुँचाता है । भले ही साहित्य में कल्पना का अंश होता हो लेकिन वह कल्पना भी यथार्थ जैसी ही अनुभूति प्रकट करती है ।

मनुष्य क्रियाशील प्राणी है इसलिए वह अपनी जीविका और विकास के नाम पर जगह-जगह स्थानांतरित होता रहता है । उसकी इसी क्रिया के कारण वह जीवित एवं विकसित भी है । व्यक्ति के स्थान परिवर्तन होने के कई कारण है ; जैसे बेरोजगारी, स्वास्थ्य, शिक्षा आदि । मनुष्य कभी खुश होकर, तो कभी दुःखी होकर स्थानांतरण करता है अतएव प्रायः श्रमजीवी वर्ग दुःखी होकर ही स्थानांतरण करता है । मजदूरों के पलायन होनेवाली स्थिति को स्पष्ट करते हुए 'मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ' उपन्यास में लेखिका लिखती हैं कि "तांबे की खदानों में काम करने के लिए ही तो वो आए थे मरंग गोड़ा ।"[5] फलतः श्रमजीवी वर्ग रोजगार की तलाश में अपने मूल स्थान से पलायन कर रहा है । वह अपना मूल स्थान छोड़कर शहर में एवं फैक्ट्रियों के निकट रहने के लिए भी लाचार है । वहीं जब मिल भी बंद हो जाती है तो बदहाली के कारण करखनदार वर्ग उस स्थान को भी छोड़ने के लिए विवश हो जाता है । मिल के बंद होने पर कामगार वर्ग अपनी जीविकोपार्जन चलाने के लिए विभिन्न प्रकार के रोजगार को करने के लिए लाचार हो जाते हैं । इसका जीता-जागता उदाहरण प्रस्तुत करते हुए लेखक एम. एम. चन्द्रा 'प्रोस्तोर' उपन्यास में लिखते हैं कि "मिल बंद हो चुकी थी और अधिकतर मिल मजदूर शहरों में रिक्शा चलाने, दिहाड़ी मजदूरी और खेती मजदूरी के लिए जाते थे ।"[6] साथ ही इस समस्या को स्पष्ट करते हुए लेखिका मधु कांकरिया भी 'पत्ताखोर' उपन्यास में लिखती हैं कि "पंचन आदिवासी था । पंचम असुर । उसकी कई पीढ़ियों ने हेमोलाइट पत्थर से लोहा बनाने का खानदानी काम किया था, इसके अलावा वे बाँस एवं डलिया बनाने जैसे छोटे-मोटे काम वगैरह भी करते थे । यद्यपि जिस विधि से वे लोहा बनाते थे उसकी जंग प्रतिरोधक शक्ति टिस्को के बने लोहे से भी अधिक थी, फिर भी बाजार में सस्ता लोहा मिलने के चलते उसका बना लोहा बिकना बन्द हो गया था ।...और वह शिल्पी से आधा मजदूर और फिर खाँटी मजदूर बनता हुआ इस परदेश में रिक्शावाला बन गया था ।"[7] व्यक्ति की सबसे बड़ी समस्या भूख की समस्या है और वह अपनी इस समस्या से निजात पाने के लिए दर-दर भटक रहा है । कारखाने बंद होने के बाद लेबर वर्ग अपनी बेरोजगारी को दूर करने के लिए और अपने पेट की क्षुधा मिटाने के लिए हर प्रकार के कामों में अपनी रुचि प्रकट करता है । इस तरह फैक्टरी वर्कर हर प्रकार के कार्य को करने के लिए बाध्य है ।

आज का मानव सामाजिक उत्थान के नाम पर और अधिक क्रूर होता जा रहा है । मानव की यह निष्ठुरता समाज को उत्थान की ओर नहीं बल्कि पतन की ओर ले जा रही है । इसी निर्दयी स्वभाव के कारण ही समाज में वर्ग भेद का जन्म हुआ है । वर्गवादी समाज में जहाँ क्रूर और अत्याचारी लोग पूँजीपति के श्रेणी में गिने जाने लगे हैं, वहीं

Copyright @ 2023 Author

ISSN: 2278-4632
Vol-13, Issue-06, No.02, June : 2023

सहज और सरल लोग मेहनकश वर्ग की श्रेणी में आ गये हैं । साधारण होने के कारण मजदूरों का रहन-सहन भी साधारण होता है । इसी साधारण स्वभाव और निर्धनता के कारण ही समाज में उन्हें दरिद्र के कोटि में रखा जाता है । "ये दरिद्र जरूर हैं पर दरिद्रता इनके भीतर नहीं है । भीतर से यह भरे पूरे हैं । ये मनुष्य होने का अर्थ जीवन और जीवन राग की साझेदारी में तलाशते हैं ।"[8] इस बात से यह पुष्टि हो जाती है कि मजदूर प्रायः आर्थिक रूप से दरिद्र और पिछड़े हैं लेकिन मानवीय स्वभाव में ये पूँजीपतियों से कहीं गुना आगे हैं । 'मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ' उपन्यास का पात्र जाम्बीर भी एक श्रमिक है । वह स्वभाव से सरल और साधारण है । वह "पहाड़ी की खड़ी चढ़ाई को अनदेखा कर सुबह से शाम तक भारी भारी सामान ढोता । बदले में जो भी मजदूरी मिल जाती, खुशी खुशी स्वीकार कर लेता । नमक भात खाने लायक पैसे तो मिल ही रहे थे । बिल्कुल संतुष्ट था वह ।"[9] जहाँ संतोष और आत्म संतुष्टि मजदूर वर्ग का मूल गुण है । वहीं शोषण एवं प्रताड़ना पूँजीपति वर्ग का मूल स्वभाव है । आधुनिक समाज में श्रमजीवी वर्ग की यही सरलता उसके शोषित तथा प्रताड़ित होने का मूल कारण है । आज के समय में मजदूरी करने के बाद "मजदूर वर्ग जो राशि-राशि उपज पैदा करता है, उसमें से उसे केवल एक हिस्सा ही वापस मिलता है ।"[10] इससे यह सिद्ध होता है कि मजदूर वर्ग द्वारा उपज और लाभ का निन्यानबे प्रतिशत हिस्सा अभिजात्य वर्ग स्वयं रख लेता है और वह मजदूरों को मजदूरी के रूप में केवल मुनाफे का एक भाग ही देता है । इतनी सब क्रिया और प्रतिक्रिया के बाद भी श्रमजीवी वर्ग हर जगह खुद को ही दोषी समझता है और अपने दोष तथा पाप की क्षमा-याचना के लिए ईश्वर के दरबार में स्वयं को अर्पित कर देता है । मजदूरों के इस स्वभाव को स्पष्ट करते हुए 'प्रोस्तोर' उपन्यास में एम. एम. चन्द्रा लिखते हैं कि "मन्दिर में मजदूर अपने कर्मों की क्षमा याचना करते हैं । स्वयं को दोषी ठहराकर भगवान को कुछ-न-कुछ अर्पित करते हैं ।"[11] आर्थिक रूप से कमजोर होने के कारण मजदूर वर्ग का आत्मबल क्षीण हो जाता है और इसलिए वह ईश्वर की शरण में जाकर स्वयं को सांत्वना देता है । आर्थिक अभाव के कारण वे "एक सूती बण्डी, कुछ ताँबे के सिक्कों और रहने की एक अँधेरी कोठरी की शक्ल अख्तियार कर लेते हैं ।"[12] आर्थिक बेहाली के बाद भी श्रमजीवी वर्ग समाज में किसी से सहानुभूति नहीं चाहता क्योंकि "सच्चा श्रमजीवी सहानुभूति को अपमान समझता है ।"[13]

गरीबी, अभाव और बेज़ार परिस्थिति के कारण मजदूर वर्ग शारीरिक दुर्बलता की मार भी झेलता है । वह हमेशा हमें शारीरिक रूप से कृशकाय ही दिखायी देता है । वास्तविक जीवन से लेकर फिल्मों तक का सूक्ष्म विवेचन करने पर भारतीय मजदूर वर्ग की यह समस्या स्पष्ट हो जाती है । उदाहरणस्वरूप अगर हम फिल्मों में भारतीय मजदूरों के रूप को देखे तो हम पाते हैं कि फिल्मों में दिखाया गया भारतीय श्रमजीवी अर्धनग्न, शारीरिक रूप से क्षीण और हताश होता है । फिल्मों में चित्रित मजदूरों की यह दशा उनके यथार्थ जीवन की परिस्थिति को उद्घाटित करती है । मजदूर वर्ग स्वभिमानी होने के कारण लोगों से सहानुभूति की उम्मीद नहीं करता है बल्कि सद-व्यवहार, समानता और सदाचार की उम्मीद करता है । वह चाहता है कि समाज के अन्य वर्ग या अन्य लोगों की तरह उसे भी सम्मान प्राप्त हो । मानसिक विभक्ति के कारण आज भी मजदूर वर्ग सम्मान के दर्जे से वंचित हैं इसलिए आज भी घरों में काम करने वाले खुंदकारों को 'रे' 'ते' जैसे संबोधन दिये जाते हैं । ऐसे शब्दों के कारण उनके स्वभिमान को आहत पहुँचती है । परिणामत: वे अपने आप को कमजोर और पिछड़ा स्वीकार कर लेते हैं । साथ ही वे यह भी मान लेते हैं कि उनका वर्ग समाज से कटा हुआ वर्ग है । जहाँ एक ओर मजदूर वर्ग प्रताड़ित होकर मन और आत्मा से कमजोर हो रहा है । वहीं दूसरी ओर मिलों में काम करने और वहाँ के प्रदूषित वातावरण की वजह से उनका शरीर भी जर्जर हो रहा है । "मिल से निकलने वाले मजदूरों के नाक, कान, चेहरे और सर के बालों पर रुई के महीन कण चिपके रहते हैं ।"[14] साथ ही "उनके खांसने की आवाज में रुदन ज्यादा है । न रुकने वाली इस दमघोटू खांसी का अभी तक कोई इलाज नहीं था । गले तक पहुंच चुकी रुई को साफ करने के लिये धागामिल के गेट पर बनी कैन्टीन से गुड़ या बेसन के लड्डू खाकर काम चला लिया जाता है ।"[15] इस तरह मानसिक और शारीरिक दोनों स्तरों पर मजदूर वर्ग कमजोर हो रहा है । पूँजीपतियों का उद्देश्य केवल व केवल पैसे कमाना है इसलिए वह कभी भी मजदूरों के अच्छे स्वास्थ्य और सेहत की बात नहीं करता और न ही कभी उनके स्वास्थ्य के बारे में विचार ही करता है । मजदूर वर्ग की स्वास्थ्य समस्या को स्पष्ट करते हुए लेखक एम. एम. चन्द्रा उपन्यास 'प्रोस्तोर' में लिखते हैं कि "मिल मालिक ने पहली बार धागामिल के मजदूरों की मेडिकल जाँच करायी । उसी रिपोर्ट में पता चला कि न सिर्फ मिल में काम करने वाले मजदूर खांसी, फेफड़े की

Copyright @ 2023 Author

ISSN: 2278-4632
Vol-13, Issue-06, No.02, June : 2023

बीमारी और दमे की चपेट हैं बल्कि उस मिल की जद में आने वाला प्रत्येक नागरिक दमे जैसी बीमारी का शिकार है ।"[16] वस्तुतः करखनदार वर्ग के स्वास्थ्य में गिरावट होती जा रही है । वे दमा और कैंसर जैसी ला-ईलाज बीमारियों की गिरफ्त में आते जा रहे हैं । मिल मालिक चाहे तो अपने निन्यानबे प्रतिशत लाभ के कुछ हिस्सों का इस्तेमाल, वह अपने यहाँ काम करने वाले मजदूर वर्ग के स्वास्थ्य सुविधा के लिए कर सकता है किंतु लालच और क्रूरता के कारण वह ऐसा नहीं कर पाता ।

आधुनिक परिवेश के इस बाजारवादी व्यवस्था के अनुरूप "मजदूर मजदूरी के बदले में पूँजीपति के हाथों अपना श्रम बेचता है ।"[17] किंतु दंभी अभिजात्य वर्ग हमेशा उनका शोषण कर उन्हें कमजोर बनाने की चेष्टा करता है । पूँजीपति यह भूल जाता हैं कि जिस प्रकार वह एक मनुष्य है, ठीक उसी प्रकार श्रमिक भी एक मनुष्य है । जिस तरह उद्योगपति वर्ग अपनी जीविका के लिए फैक्ट्री और मिल की स्थापना करता है, ठीक उसी तरह कामगार वर्ग भी अपने श्रम के बल पर अपना जीविकोपार्जन करता है । उसे अपनी छोटी से छोटी जरूरतों को पूरी करने के लिए अपने शरीर की भी आहुति देनी पड़ती है । इसका जीवंत प्रसंग प्रस्तुत करते हुए मधु कांकरिया 'पत्ताखोर' उपन्यास में लिखती हैं कि "टीन बनानेवाली फैक्ट्री में काम करने वाला बद्री ने अपनी लड़की को ब्याहने के लिए मुआवजे के लालच में चलती मशीन के नीचे अपना अंगूठा दबाया था । पाँच वर्ष पहले जद्दू ने अपना एक गुर्दा बीस हजार रुपए में बेच दिया था, जिससे खून से चलनेवाली इस काल-गाड़ी के बदले में अपना ऑटो खरीद सके ।"[18] तात्पर्यत: मजदूरों को अपनी छोटी-छोटी ख्वाहिशें पूरी करने के लिए बड़ी-बड़ी कुर्बानी देनी पड़ती है लेकिन इन सब के बावजूद भी अभिजात्य वर्ग को कोई फर्क नहीं पड़ता और उनके द्वारा श्रमजीवियों के शोषण का सिलसिला चलता रहता है । खदान में काम करने वाले मजदूरों की अवस्था अधिक दयनीय है । 'मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ' उपन्यास का पात्र 'सगेन' अपनी अवस्था बयान करते हुए कहता है कि "जमीन के नीचे से निकाले गये पत्थरों को बड़ी बड़ी मशीनों के द्वारा चूर करके फिर विभिन्न प्रकार के रसायनों की मदद से धोकर फालतू कचरों से अलग करने के बाद मशीन की मदद से सुखाकर पीली धूल में बदल दिया जाता है । इन्हीं धूलों को तो कई कई मजदूरों के साथ मिलकर बड़े बड़े ड्रमों में भरना पड़ता है मुझे । भरते वक्त ड्रमों को हिलाते रहने को कहा जाता है न, ताकि उनमें ज्यादा से ज्यादा धूल अट सके । तो यही सब करते समय पीली धूल उड़ उड़कर आंख, नाक, कान, मुंह में घुस जाती है ।"[19] फलतः खदान में काम करने वाले मजदूरों का स्वास्थ्य धीरे-धीरे कमजोर हो जाता है । जिसकी वजह से वे अस्वस्थ और रुग्रता का शिकार होकर समय के पहले ही वृद्ध हो जाते हैं । कभी-कभी तो खदान में काम करते समय मजदूरों की मृत्यु भी हो जाती हैं । यशोभूमि अखबार के अनुसार "छत्तीसगढ़ के अनूपपुर जिले के एक खदान हादसे में 7 लोगों की मौत हो गई है । घटना 26 जनवरी की है ।"[20] यह वाकया कोयला खदान का है । अपनी जीविका चलाने के लिए कोयला मजदूरों को खदान के अंदर जाकर काम करना पड़ता है । कोयला खदानों में प्रायः ऑक्सीजन का अभाव होता है । ऑक्सीजन की कमी और दम घुटने के कारण खदान मजदूर काल का ग्रास बन जाते हैं । इस तरह हर रोज मजदूरों की मृत्यु की खबर अखबारों में आती रहती है । फलतः मजदूर वर्ग कभी कोयला खदान, कभी मिल, कभी इमारत तो कभी खदान में गिरकर मौत का शिकार हो जाता हैं ।

वैश्विकरण के कारण पूरा विश्व बाजार के रूप में परिणत हो गया है । इस बाजारवादी परंपरा में मजदूर और नौकर वर्ग बेरोजगारी का शिकार हो रही हैं परंतु सभी देश की सरकारें इसकी परवाह न करते हुए, उन्मादी होकर विकासवाद की ओर तीव्र गति से दौड़ रही हैं । विकासवाद के नाम पर सरकार ने गरीबों और अमीरों के बीच की खाई को भी बढ़ा दिया है । पहले श्रमजीवी को एक दिन की भी मजदूरी दी जाती थी किंतु आज के इस दौर में बेरोजगारी जैसी महामारी के कारण सभी छोटी-बड़ी कंपनियाँ मजदूर को एक दिन के ट्रायल बेस पर ही निपटा देती है । जिसके कारण उद्योगपतियों के मजदूरी की कुछ लागत बच जाती है । इस समस्या को स्पष्ट करते हुए एम. एम. चन्द्रा 'प्रोस्तोर' उपन्यास में लिखते हैं कि "यहाँ रोज ट्रायल करने लोग आते हैं । एक दिन काम करके चले जाते हैं । मेरा तो फ्री में काम हो रहा है । यदि तुझे करना है तो अकेले ही करना पड़ेगा ।"[21] वस्तुतः अगर मिल मालिक एक दिन के ट्रायल के लिए एक मजदूर का इस्तेमाल करता है और वही उसने पूरे माह अगर कुल तीस (30) मजदूरों का ट्रायल भी किया तो उसने अपनी कंपनी में लगने वाली मजदूरी में से कुल

Copyright @ 2023 Author

ISSN: 2278-4632
Vol-13, Issue-06, No.02, June : 2023

एक माह की मजदूरी बचा ली । इस तरह अभिजात्य वर्ग विभिन्न तरीकों से मजदूर वर्ग का शोषण कर रहा है । व्यक्ति अपने वेतन में बढ़ोतरी होने पर अधिक खर्च का विचार कर सकता है लेकिन अगर उसके वेतन में वृद्धि ही नहीं हुई तो वह ज्यादा खर्च की कल्पना कैसे करें ? और इसी वजह से "मजदूर अपनी आय जीवित रहने के लिए आवश्यक वस्तुओं पर ही खर्च करते हैं, और ऐसा उन्हें करना पड़ता है ।"[22]

विकासवाद के नाम पर उद्योगपति वर्ग सरकार से साठ-गाँठ कर गाँव, जंगल जैसे स्थानों पर स्थित लोगों को बेघर कर उनके स्थानों पर अपना आधिपत्य जमा रहा है । साथ ही उन्हें अपने कँपनियों में काम करने से भी वंचित कर रहा है । इस समस्या का सजीव चित्रण महुआ माजी कृत 'मरंग गोड़ा नीलकंठ' उपन्यास में हुआ है । उपन्यास में लेखिका लिखती हैं कि "जिनकी जमीन पर कंपनी फल-फूल रही थी, जिनके घर और खेत उजाड़ दिए गए थे कंपनी का टेलिंग डैम बनाते समय...खदान को विस्तार देते समय...मिल बनाते समय...और वे बिल्कुल बेरोजगार आश्रयहीन हो गये थे ।"[23] पूँजीपति वर्ग के अत्याचारों के दंश निम्न वर्ग के मजदूरों को झेलना पड़ता है । वे निम्न वर्ग की जमीनों को भी अपनाकर उन्हें बेघर बना रहे हैं । समाज में वर्ग-भेद के कारण ही श्रमिकों को विभिन्न प्रकार की सामाजिक प्रताड़ना का शिकार होना पड़ रहा है । 21वीं सदी के इस दौर में भी बड़े पैमाने पर गैर-कानूनी तरीके से मजदूरों का क्रय-विक्रय हो रहा है । समाज के प्रतिष्ठित लोग श्रमजीवी वर्ग को पशुतुल्य समझते हैं, इसी वजह से वे उनके साथ पशुओं जैसा व्यवहार भी करते हैं । अंग्रेज अपने शासन काल में विभिन्न देशों से मनुष्यों को कैद कर कुली मजदूर के रूप में स्थानांतरित करते थे । अश्विनी कुमार पंकज द्वारा विरचित उपन्यास 'माटी माटी अरकाटी' में बँधुआ गिरमिटिया मजदूर की समस्या को उकेरा गया है । उपन्यास का नायक कोंता स्वयं एक गिरमिटिया मजदूर है । बँधुआपन की त्रासद स्थिति, अस्वतंत्रता पूर्ण जीवन, अमानवता जैसी समस्याएँ गिरमिटिया मजदूर के जीवन की सामान्य समस्या है । गिरमिटिया मजदूर की परिस्थिति को स्पष्ट करने के लिए अश्विनी कुमार पंकज ने उपन्यास 'माटी माटी अरकाटी' में पात्र डॉक्टर और जहाज के कैप्टन के संवाद को उकेरा है । उपन्यास में डॉक्टर जहाज के कैप्टन से कहता है कि "'सब के सब जंगली हैं । खयाल रखने से भी कुछ नहीं होगा ।' डॉक्टर के चेहरे पर घृणा थी । विद्रूपता से मुस्कुराते हुए बोला । 'समुद्र को भी तो अपना हिस्सा चाहिए ।' कैप्टन को बुरा लगा । उसने कहा, 'एक भी कुली का मरना कंपनी के लिए ठीक नहीं है । एक कुली की मौत मतलब 100 रुपये का सीधा घाटा ।'"[24] अतः गिरमिटिया मजदूर की समस्या भले ही अंग्रेजों के शासन काल में रही हो लेकिन आज स्वतंत्रता के बाद भी भारत में मजदूरों की हू-ब-हू वैसी ही समस्या विद्यमान है । आज बड़े स्तर पर भारत के ग्रामीण क्षेत्रों से गरीब और बेबस व्यक्तियों को बंधक बनाकर विदेशों में निर्यात किया जाता है । आधुनिकता के इस दौर में अभिजात्य वर्ग आदिम सभ्यता को अपनाता जा रहा है । वह मजदूरों को इंसानों की श्रेणी से भिन्न समझता है । इसका जीवंत उदाहरण 'मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ' उपन्यास में प्रस्तुत है । उपन्यास में लेखिका लिखती हैं कि "कॉरपोरेशन द्वारा नियुक्त आदिवासी मजदूरों को भी सही मजदूरी नहीं दी जाती थी । अनेक बार मजदूरी के रूप में दिए गए गेहूं सड़े हुए होते थे । कॉरपोरेशन के अधिकारी तथा कर्मचारियों द्वारा मजदूरों तथा उनकी औरतों के साथ बदसलूकी की जाती थी ।"[25]

मजदूर वर्ग का समाज बहुत ही वृहत है । वृहत होने के साथ-साथ वे असंगठित और अशिक्षित है इसीलिए उद्योगपति बड़ी सहजता से मजदूरों का शोषण कर रहा है । उनके असंगठित होने का उदाहरण 'मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ' उपन्यास में भी चित्रित है । उपन्यास में लेखिका लिखती हैं कि "कंपनी वालों को जल्द से जल्द तीसरे टेलिंग डैम का निर्माण करना था । स्थानीय मजदूरों द्वारा असहयोग किये जाने पर उन्होंने बाहरी मजदूरों को लाकर भारी संख्या में पुलिस बल की मदद से काम करवाना आरंभ कर दिया ।"[26] 19वीं शताब्दी में ही मजदूर वर्ग को एक जुट होने के लिए कार्ल मार्क्स ने उन्हें संगठित होने का मंत्र दे दिया था किंतु आज भी वे असंगठित है । यद्यपि संगठित होने के बाद भी लालची और ऐयाश यूनियन नेताओं की वजह से श्रमिक वर्ग मिल मालिक का शिकार हो रहे हैं । उपन्यास 'प्रोस्तोर' में एम. एम. चन्द्रा लिखते हैं कि "मिल मालिक ने मजदूर यूनियनों के कुछ नेताओं को खरीद लिया, उनका आपस में झगड़ा करा दिया । धागामिल समर्थक यूनियन और मजदूर समर्थक यूनियन आपस में भिड़ गये ।"[27] तात्पर्यत: संगठित होने के बावजूद भी मजदूर वर्ग शोषण और

Copyright @ 2023 Author

ISSN: 2278-4632
Vol-13, Issue-06, No.02, June : 2023

प्रताड़ना का शिकार हो रहा है । आधुनिकता के इस दौर में जहाँ मिल मालिक मजदूर वर्ग को अपना गुलाम बनाकर रखना चाहता है, वहीं मजदूर वर्ग स्वतंत्र और उन्मुक्त जीवन जीने के लिए झटपटा रहा है । वस्तुतः पूँजीपति वर्ग कितने भी यथासाध्य प्रयत्न कर ले वह मजदूर वर्ग को पूर्णतः गुलाम नहीं बना सकता । क्योंकि "श्रम का मूल्य केवल श्रम से ही मापा जा सकता है ।"[28] अर्थात् उद्योगपति जब तक श्रमिक वर्ग के श्रम की कीमत नहीं समझेगा, तब तक वह मजूर वर्ग की वास्तविकता से अनभिज्ञ रहेगा । जब अभिजात्य वर्ग मजदूरों के मजदूरी की कीमत समझ जाएगा, तब वह उनका सम्मान करने लगेगा ।

निष्कर्ष :

समाज में मजदूर वर्ग को कामगार, लेबर, श्रमजीवी आदि बहुत से नामों से पहचान मिली है किंतु इतनी सब संज्ञाओं के बाद भी श्रमिकों की समस्याओं में कोई इजाफा नहीं हुआ है । समाज में प्रायः दो किस्म के मज़दूर पाये जाते हैं ; उच्च श्रेणी मजदूर और निम्न श्रेणी मजदूर । उच्च श्रेणी के मजदूरों को नौकर वर्ग एवं निम्न श्रेणी के मजदूरों को श्रमजीवी वर्ग के नाम से भी अभिहित किया जा सकता है । आज उच्च श्रेणी का मजदूर सरकारी और गैर-सरकारी सभी सुविधाओं का उपभोग कर रहा है । वहीं निम्न श्रेणी का मजदूर रोटी, कपड़ा और मकान के लिए संघर्ष कर रहा है । भारत का श्रमजीवी वर्ग सरकारी पहचान पत्र से वंचित होने के कारण सरकारी योजनाओं और सुविधाओं से भी वंचित है । कार्ल मार्क्स के वर्ग संगठन के बाद कॉरपोरेट मजदूरों (उच्च श्रेणी) को सहयोग और सहायता तो मिली लेकिन निम्न श्रेणी का मजदूर इन सब से अछूता रह गया इसलिए आज भी निम्न श्रेणी का खाँटी मजदूर प्रताड़ित और शोषित है । समाज में समानता, सद्भाव को जीवित रखने के लिए और समाज की समस्याओं को खत्म करने के लिए विश्व भर में विभिन्न प्रकार के शोध हो रहे हैं । फलतः दुनिया में जितने भी अनुसंधान हो रहे हैं एवं जितने भी सिद्धांतों का उदय हो रहा है । उन सबका उद्देश्य केवल-व-केवल मनुष्य समुदाय का उद्धार और मनुष्यता की रक्षा करना है । समाज में जब तक उच्च वर्ग और निम्न वर्ग की खाई समाप्त नहीं होगी, तब तक समाज का संपूर्ण विकास होना संभव नहीं है इसलिए समाज को विकसित करने के लिए अभिजात्य वर्ग और मजदूर वर्ग के बीच स्थापित संघर्ष को गतिमान करने के साथ-साथ उनके बीच सामंजस्य भी बनाये रखना होगा ।

संदर्भ सूची :

1. बच्चन सिंह ; निराला का काव्य (औपनिवेशिक और उत्तर औपनिवेशिक समय) ; आधार प्रकाशन, पंचकूला हरियाणा ; प्रथम संस्करण 2005 ; पृ 22
2. वही से ; पृ 54
3. रामशरण जोशी ; आदमी, बैल और सपने ; कल्याणी शिक्षा परिषद्, नई दिल्ली ; दूसरा संस्करण 2009 ; पृ 12
4. बच्चन सिंह ; निराला का काव्य (औपनिवेशिक और उत्तर औपनिवेशिक समय) ; आधार प्रकाशन, पंचकूला हरियाणा ; प्रथम संस्करण 2005 ; पृ 51
5. महुआ माजी ; मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ ; राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली ; पहला संस्करण 2012 ; पृ 18
6. एम. एम. चन्द्रा ; प्रोस्तोर ; डायमंड पॉकेट बुक, नई दिल्ली ; संस्करण 2018 ; पृ 81
7. मधु कांकरिया ; पत्ताखोर ; राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली ; पहला पुस्तकालय संस्करण 2005 ; पृ 186
8. वही से ; पृष्ठ 204
9. महुआ माजी ; मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ ; राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली ; पहला संस्करण 2012 ; पृ 17
10. कार्ल मार्क्स ; उजरती श्रम और पूँजी ; राहुल फाउण्डेशन, लखनऊ, पहला संस्करण : जनवरी 2006, पुनर्मुद्रण : दिसम्बर 2013 ; पृ 15
11. एम. एम. चन्द्रा ; प्रोस्तोर ; डायमंड पॉकेट बुक, नई दिल्ली ; संस्करण 2018 ; पृ 14 और 15
12. कार्ल मार्क्स ; उजरती श्रम और पूँजी ; राहुल फाउण्डेशन, लखनऊ, पहला संस्करण : जनवरी 2006, पुनर्मुद्रण : दिसम्बर 2013 ; पृ 21
13. बच्चन सिंह ; निराला का काव्य (औपनिवेशिक और उत्तर औपनिवेशिक समय) ; आधार प्रकाशन, पंचकूला हरियाणा ; प्रथम संस्करण 2005 ; पृ 107

Copyright @ 2023 Author

ISSN: 2278-4632
Vol-13, Issue-06, No.02, June : 2023

14. एम. एम. चन्द्रा ; प्रोस्तोर ; डायमंड पॉकेट बुक, नई दिल्ली ; संस्करण 2018 ; पृ 11 और 12
15. वही से ; पृ 12
16. वही से ; पृ 79
17. कार्ल मार्क्स ; उजरती श्रम और पूँजी ; राहुल फाउण्डेशन, लखनऊ, पहला संस्करण : जनवरी 2006, पुनर्मुद्रण : दिसम्बर 2013 ; पृ 08
18. मधु कांकरिया ; पत्ताखोर ; राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली ; पहला पुस्तकालय संस्करण 2005 ; पृ 200
19. महुआ माजी ; मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ ; राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली ; पहला संस्करण 2012 ; पृ 90
20. यशोभूमि अखबार ; दिनांक 31 जनवरी, 2023 को देखा गया ।
21. एम. एम. चन्द्रा ; प्रोस्तोर ; डायमंड पॉकेट बुक, नई दिल्ली ; संस्करण 2018 ; पृ 100
22. कार्ल मार्क्स ; मजदूर दाम और मुनाफा ; राहुल फाउण्डेशन, लखनऊ, पहला संस्करण : जनवरी 2006, पुनर्मुद्रण : दिसम्बर 2013 ; पृ 09
23. महुआ माजी ; मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ ; राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली ; पहला संस्करण 2012 ; पृ 104
24. अश्विनी कुमार पंकज ; माटी माटी अरकाटी (हिल कुली कोंता की कहानी) ; राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली ; पहला संस्करण 2016 ; पृ 23
25. महुआ माजी ; मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ ; राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली ; पहला संस्करण 2012 ; पृ 114
26. वही से ; पृ 171
27. एम. एम. चन्द्रा ; प्रोस्तोर ; डायमंड पॉकेट बुक, नई दिल्ली ; संस्करण 2018 ; पृ 80
28. कार्ल मार्क्स ; उजरती श्रम और पूँजी ; राहुल फाउण्डेशन, लखनऊ, पहला संस्करण : जनवरी 2006, पुनर्मुद्रण : दिसम्बर 2013 ; पृ 10

Copyright @ 2023 Author